Sanvahak (संवाहक)

A Peer Reviewed, Multidisciplinary (All Subjects) & Multilingual (All Languages) Quarterly Research journal

ISSN : 3108-1347 (Online)
Vol.-2; Issue-1 (Jan.-March) 2026
Page No.- 01-05
©2026 **Sanvahak**
https:// sanvahak.gyanvividha.com

Author's:

डॉ. गोविन्द कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर (संस्कृत),
राजकीय महाविद्यालय पौखाल, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड.

Corresponding Author :

डॉ. गोविन्द कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर (संस्कृत),
राजकीय महाविद्यालय पौखाल, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड.

अभिज्ञान शाकुन्तलम् में भारतीय जीवन-दर्शन और सामाजिक मूल्यों का प्रतिबिंब

शोध सार- भारत का प्राचीन साहित्य असीम है, जो संस्कृत भाषा में मिलता है। संस्कृत भाषा के दो रूप वैदिक तथा लौकिक हैं। वैदिक संस्कृत में वेद, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् कोटि के ग्रन्थों की रचना हुई थी। वैदिक संस्कृत का विकसित रूप ही लौकिक संस्कृत है। इसका प्रारम्भ सूत्र-साहित्य से होता है। संस्कृत के आदिकवि वाल्मीकि कृत रामायण और व्यास-कृत महाभारत हैं। रामायण और महाभारत के आधार पर संस्कृत में असंख्य महाकाव्यों और नाटकों की रचना हुई है। इनके अतिरिक्त अनेक काव्य-ग्रन्थ गद्य-शैली में लिखे हुए मिलते हैं।

महाकवि कालिदास द्वारा रचित विश्वप्रसिद्ध नाटक अभिज्ञानशाकुन्तलम् भारतीय संस्कृति, आदर्शों और जीवन-मूल्यों का अनुपम संगम है। जो प्रेम, कर्तव्य (धर्म), प्रकृति प्रेम एवं वन्य संरक्षण, पारिवारिक रिश्तों जैसे कण्व का पितृत्व वात्सल्य प्रेम, भारतीय सौंदर्यबोध और सामाजिक शिष्टाचार, अतिथि सत्कार, राजधर्म को दर्शाता है। यहां शकुंतला आदर्श भारतीय नारी और राजा दुष्यंत धर्मपरायण शासक का प्रतिनिधित्व करते हैं। शाकुंतला और दुष्यंत का प्रेम शारीरिक आकर्षण से शुरु होकर, तपस्या और त्याग से जुड़कर पवित्र बनता है, जो भारतीय सामाजिक जीवन मूल्यों के अनुरूप है। यह प्रेम-संबंध 'गन्धर्व विवाह' के रूप में दिखाया गया है, जो उस समय के सामाजिक नियमों के अनुसार मान्य था। कण्व ऋषि का आश्रम भारतीय ऋषि-मुनियों के जीवन, तपस्या और सात्विकता का प्रतीक है। यहां का वातावरण शांतिपूर्ण और आध्यात्मिक है। अभिज्ञान शाकुंतलम नाटक का भारतीय संस्कृति के समग्र विकास में योगदान रहा है।

बीज शब्द- संस्कार, सौंदर्य बौध, प्रेम, जीवन दर्शन, नैतिकता, आदर्श मूल्य, राजधर्म।

आदर्श सामाजिक मूल्य- अभिज्ञानशाकुंतलम् भारतीय संस्कृति का आदर्श मूल्यों स्थापित करती है। सामाजिक मूल्यों को परिभाषित करते हुए महर्षि कण्व पुत्री शाकुन्तला की विदाई करते हुए उत्तरदायित्व एवं

संस्कारों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि हे पुत्रि ! तुम यहाँ से पति के घर में जाकर सास, ससुर आदि अपने गुरुजनों (बड़ों) की सेवा करना। और अपनी सपत्नियों (सौतों) से अपनी प्रिय सखियों की तरह ही प्रेम-पूर्वक व्यवहार करना। पति के द्वारा किसी समय तिरस्कार करने या विपरीत आचरण करने पर भी क्रोध के वश हो उससे अर्थात पति से कभी अप्रसन्न और विरुद्ध मत होना। अर्थात् पति पर क्रोध मत करना। अपने परिजनों (नौकर, चाकर, पतिके बन्धु-बान्धव आदि पार्श्ववर्ती जनों) पर सदा अनुकूल भाव रखना, अर्थात् उन पर सदा दया का ही भाव रखना और राजोचित सुख भोगों को पाकर किसी से ईष्या, द्वेष और गर्व कभी मत करना। इस प्रकार चलने से (व्यवहार करने से) युवती स्त्रियां सुयोग्य गृह-स्वामिनी पद को प्राप्त करती हैं। इससे विरुद्ध चलने वाली स्त्रियाँ कुल के लिए विपत्ति और पीड़ा देने वाली ही होती हैं। अतः तुम सावधान होकर सबके साथ उचित व्यवहार करना। अभिमान, राग, द्वेष, ईर्ष्या आदि दोषों को पास में मत आने देना। इस प्रकार चलने से तुम ही घर की मालकिन हो जाएगी।

"शुश्रूषस्व गुरून्, कुरु प्रियसखावृत्तिं सपत्नीजने,
भर्त्तविप्रकृतापि रोषणतया मास्म प्रतोपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने, भोगेष्वेनुत्मेकिनी,
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो, वामाः कुलस्याऽऽधयः।।"[1]

महर्षि कण्व पुत्री शकुंतला की विदाई के वक्त राजा दुष्यंत को संदेश देना चाहते है। यह संदेश भारतीय संस्कृति में एक पिता के द्वारा दिया गया सबसे उत्कृष्ट एवं आशावादी संदेश है। अपने पुत्री के प्रति निस्वार्थ भाव एवं दारुण शब्दों से कण्व ऋषि कहते हैं कि है राजन! संयम धन और तपस्यापरायण हमारी प्रतिष्ठा और मान मर्यादा को अच्छी तरह ध्यान में रखते हुए तथा अपने उच्च कुल को भी देखते हुए अतएव स्वाभाविक इस विशिष्ट प्रीति को भी देखते हुए इस शकुंतला को अपनी और स्त्रियों के बराबर ही समझना। यही मेरा कहना है। इससे आगे तो सब भाग्याधीन है अर्थात्- अपने गुण से यह स्वयं ही इस पद को अपनी योग्यता से प्राप्त कर सकती है। इसके लिए तो स्त्री के बंधु बांधवों को कुछ कहना कि नहीं चाहिए अर्थात मेरी इस कन्या शकुंतला को तुम कम से कम इसी प्रकार स्नेह से रखना जिस प्रकार तुम अपनी अन्य पत्नियों का रखते हो। इससे अधिक इसे ही महारानी बनाना यह बात तो मैं नहीं कहना चाहता हूं क्योंकि पति की विशेष स्नेह और अनुराग तथा महारानी पद आदि की प्राप्ति तो उसके अपने भाग्य और गुणों के अधीन ही है। अतः इसके लिए कहना तो हमारा व्यर्थ है।

"अस्मान्त्साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलश्चात्मन
स्त्वय्यस्याः कथमप्यबान्धवकृतां स्नेहप्रवृत्तिञ्च ताम् ।
सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकमियं दारेषु दृश्या त्वया,
भाग्याधीनमतः परं, न खलु तद्वाच्यं वधूबन्धुभिः।।"[2]

प्रकृति प्रेम- अभिज्ञान शाकुंतलम् नाटक का अधिकांश भाग तपोवन ऋषियों के आश्रम में घटित होता है, जो भारतीय संस्कृति में प्रकृति के प्रति गहरे सम्मान और प्रेम को दर्शाता है। शाकुन्तला को प्रकृति पुत्री भी माना जाता है। इसलिए शकुंतला का पालन-पोषण प्रकृति की गोद में हुआ है और वह पेड़-पौधों व पशु-पक्षियों को अपने परिवार का हिस्सा मानती है। नाटक में प्रकृति चित्रण अत्यंत मनमोहक एवं जीवंत है। विदाई के समय शकुंतला अपने द्वारा जल से सीजे गए पेड़-पौधों एवं वनस्पतियों को पति गृह जाने की अनुमति लेती है जिसका वर्णन मिलता है।

अभिज्ञान शाकुंतलम नाटक में प्रकृति प्रेम का वर्णन करते हुए महर्षि कण्व कहते हैं कि यह शकुंतला तुम्हें (वृक्षों को) जल पिलाये बिना पहले स्वयं कभी जल नहीं पीती थी, जो आभूषणों से अत्यंत प्रेम करने पर भी तुम्हारे नए पत्तों को स्नेहवश नहीं तोड़ती थी और तुम्हारे नए फूल आने पर उत्सव मनाती थी, वह शकुंतला अब पतिगृह जा रही है। सभी वृक्ष उसे जाने की अनुमति दें। ऋषि कण्व द्वारा तपोवन के वृक्षों से शकुंतला की विदाई के लिए अनुमति माँगने के प्रसंग का है, जो मानव और प्रकृति के गहरे प्रेम को दर्शाता है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति प्रेम का जीवंत उदाहरण में देखने को मिलता है। अभिज्ञान शाकुन्तलम् प्रकृति प्रेम का अनूठा संगम है।

"पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्॥"[3]

राजधर्म- राजा प्रजा के लिए ईश्वर होता है। भारतीय इतिहास में राजा को सर्वोपरि माना गया है। राजदण्ड हाथ में धारण करके कुमार्ग पर चलने वाले दुष्टों का दामन करते हुए प्रजा के झगड़ों को दूर करते करके राज्योचित निर्णय लेकर राज्य में शांति एवं प्रजा की सुरक्षा करता हैं। महाराज ! आप तो अपने सुख की इच्छा किए बिना केवल लोकोपकार (प्रजा के पालन) के लिए ही प्रतिदिन परिश्रम एवं कष्ट उठाते रहते हैं। अथवा- राजा का जन्म ही इसी कार्य के लिए है या राजा की वृत्ति हो ऐसी है। क्योंकि वृक्ष अपने शिर पर सूर्य के प्रखर संताप को सहन करके भी अपने आश्रितों का सदा अपनी छाया से संताप दूर करता रहता है।

"स्वसुखनिरभिलाषः खिद्यसे लोकहेतोः,
प्रतिदिनमथवा ते सृष्टिरेवंविधैव।
अनुभवति हि मूर्ध्ना पादपस्तीव्रमुष्णं,
शमयति परितापं छायया संश्रितानाम्।।"[4]

लोक मान्यताएं एवं विश्वास- महर्षि कण्व का आश्रम शांति एवं संस्कार, तपस्या, सादगी और प्रकृति के साथ सामंजस्य का प्रतीक है। सत्य और विश्वास प्रकृति के कण कण में है। यहां आश्रम में घटित घटनाएं ईश्वरीय लीलाएं है। राजा दुष्यंत सूत से आश्रम से थोड़ी दूरी पर ही रथ रोकने को कहता है जिससे आश्रमवासियों के कार्यों में विघ्न न हो तथा स्वयं धनुष और आभूषण आदि सारथि को सौंपकर आश्रम की ओर आता है। द्वार पर ही उसकी दाई भुजा फड़कती है। यह महर्षि कण्व आश्रम की भूमि शांत है और मेरी दाई भुजा फड़क रही है इस (शकुन) का फल यहाँ कैसे हो सकता है। यह संकेत स्त्री प्राप्ति का है परंतु यहां आश्रम में। यहाँ इसका अवसर कहाँ? किंतु जो घटनाएं होनी है उसके द्वार तो सब जगह खुले होते हैं अर्थात् होनी तो कहीं भी होकर ही रहती है।

"शान्तमिदमाश्रमपदं स्फुरति च बाहुः कुतः फलमिहाऽस्य।
अथवा भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र।।"[5]

परित्याग संताप- अभिज्ञान शाकुन्तलम् नाटक राजा दुष्यंत द्वारा पत्नी शाकुंतला का शाप के प्रभाव से परित्याग करने पर विरह वेदना का दारुण्य रुप देखने को मिलता है। राजा दुष्यंत द्वारा शाकुन्तला का प्रेम जो अंगुठी दी गई थी उसके मिलने पर पूर्व घटित घटनाओं का स्मरण होता है। जैसे ही अपनी अँगूठी को देखने से महाराज को याद आई कि मैंने सचमुच शाकुन्तला से एकान्त में विवाह किया था और अज्ञान के कारण उसका परित्याग किया है, तभी से महाराज पश्चात्ताप में पड़े हुए हैं। राजा दुष्यन्त रमणीय वस्तुओं से घृणा करते हैं। पहले की तरह मन्त्रियों से प्रतिदिन नहीं मिलते हैं। जागते हुए ही बिस्तर के किनारों पर करवटें बदलते हुए रात्रियाँ व्यतीत करते हैं। जब उदारता के कारण अन्तःपुर की स्त्रियों को उचित उत्तर देते हैं तब नामोच्चारण में गलती (शाकुन्तला का नामोच्चारण) करके बहुत देर तक लज्जा के कारण व्याकुल रहते हैं।

"रम्यं द्वेष्टि यथा पुरा प्रकृतिभिर्न प्रत्यहं सेव्यते,
शय्योप्रान्तविवर्तनैर्विगमयत्युन्निद्र एव क्षपाः।
दाक्षिण्येन ददाति वाचमुचितामन्तः पुरेभ्यो यदा,
गोत्रेषु स्खलितस्तदा भवति च व्रीडाविलक्षश्चिरम्।।"[6]

शाकुन्तला के साथ बिताए अतीत के सुनहरे पलों को दुष्यन्त याद कर रहा है। किन्तु बुरे व्यवहार के कारण पश्चात्ताप भी हो रहा है। दुष्यन्त विरह वेदना की आग में जल रहा है। शाकुन्तला के साथ किए व्यवहार से उसे आत्मग्लानि हो गई है। पश्चात्ताप को आग बहुत तीव्र होती है। दुष्यन्त शाकुन्तला को दी गई अंगूठी को देख कर उसे

कह रहा है कि तुम भी मेरी तरह दुर्भाग्यशालिनी है। राजा दुष्यंत शाकुन्तला के साथ किए व्यवहार से बहुत दुःखी है।

"तव सुचरितमङ्गुलीय नूनं,
प्रतनु कृशेन विभाव्यते फलेन।
अरुणनखमनोहरासु तस्या-
श्च्युतमसि लब्धपदं यदङ्गुलीषु।।"[7]

पिता-पुत्री वात्सल्य- वात्सल्य प्रेम का भाव अत्यंत मार्मिक होता है जिसका उदाहरण अभिज्ञान शाकुंतलम में पुत्री की विदाई पर देखने को मिलता है। कण्व ऋषि कहते हैं कि आज शाकुंतला पतिगृह जा रही है यह सोचकर मेरा हृदय व्याकुलता से भर गया है, गला अश्रु रोकने से रुक गया है और आँखें चिंताओं से जुड़ हो गई हैं; इस विकलता में वनवासी मुनि को इतनी पीड़ा है, तो सोचिए गृहस्थ लोग अपनी पुत्री के वियोग के दुख से कितने दुखी होते होंगे। कण्व ऋषि शाकुंतला की विदाई के समय अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हैं।

"यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्थया
कण्थः स्तम्भितबाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमपि स्नेहादरण्यौकसः
पीड्यन्ते गृहिणः कथं न तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः।।"[8]

अलौकिक सौंदर्य- अभिज्ञान शाकुन्तलम् अलौकिक सौंदर्य एवं प्रेम का अनूठा संगम है। राजा दुष्यंत शाकुंतला का आश्रम में देखकर उसके सौन्दर्य पर मोहित हो जाते हैं। अलौकिक सुंदरता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि यह शाकुन्तला अछूता-बेसूँधा हुआ पुष्प है, जिसे नखों से नहीं काटा गया कोमल-पल्लव, विना बीन्धा हुआ अखण्डित रत्न, किसी से भी अनास्वादित नवीन-मधु (सहत), पुण्यों का अखण्डित फल, इसका निर्दोष यह रूप-लावण्य है। इस शाकुन्तला को किस भाग्यशाली के उपयोग में विधाता लाएँगे? अर्थात् इसका कौन स्वामी होगा। यह किस भाग्यशाली की अर्धाङ्गिनी बनेगी। मैं यहां सोच विचार रहा हूं।

"अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहै
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं,
न जाने भोक्तारंकमिह समुपस्थास्यति विधिः।।"[9]

आदर्श पिता कर्तव्य- भारतीय समाज में पिता का पहला कर्तव्य यही होता है कि अपनी पुत्री का विवाह करें। पुत्री की विदाई करके पिता के चित् को जो प्रसन्नता मिलती है वह अमूल्य होती है। कण्व ऋषि कहते हैं आज स्नेह की प्रवृत्ति से ऐसा मालूम होता है कि शकुंतला को अपने पति के घर भेजकर मैंने आज चित् की शांति प्राप्त की हो। कन्या रूपी धन तो दूसरे का (पति का) ही है अतः आज इसको उसके स्वामी के पास भेजकर मैं उसी प्रकार प्रसन्नोचित और चिंता मुक्त हो गया हूं। जैसे बहुत दिनों से अपने पास रखे हुए दूसरे की धरोहर को उसके स्वामी को वापिस सौंपकर धनी (साहूकार) प्रसन्न और चिंता मुक्त हो जाता है।

"अर्थो हि कन्या परकीय एव, तामद्य सम्प्रेष्य परिग्रहीतुः।
जातोऽस्मि सद्यो विशदान्तरात्मा, चिरस्य निक्षेपमिवाऽर्पयित्वा।।"[10]

शापित जीवन मूल्य- अभिज्ञान शाकुंतलम् नाटक में शाकुन्तला को महर्षि दुर्वासा का आतिथ्य सत्कार न करने पर उनके द्वारा दिया गया शाप शकुंतला को जीवन में भूचाल ला देता है। यही शाप समाज में प्रेम विवाह को विवाह न मानने का उदाहरण प्रस्तुत करता है। शाप से राजा दुष्यंत शकुंतला को भूल जाता है। शाकुन्तला को पत्नी रुप में अपने से मना कर देता है। शाकुंतला के साथ गए शिष्य और गौतमी भी शाकुंतला को वहीं छोड़कर आश्रम लौट जाते हैं। यही प्रेम विवाह समाज को प्रभावित करता है और समाज में प्रेम विवाह का दुष्प्रभाव देखने को मिलता है।

"विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा, तपोनिधिं वेत्सि न मामुपस्थितम्।

स्मरिष्यति त्वां न स बोधितोऽपि सन्, कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव।।"[11]

विवाह संस्कार- राजा दुष्यंत शिकार करते हुए आश्रम में शकुंतला की सुंदरता और स्वभाव से मोहित हो जाते हैं और शकुंतला भी राजा दुष्यंत के प्रति आकर्षित होती है। अभिज्ञान शाकुंतलम् में प्रेम विवाह ही केंद्रीय विषय है। जहाँ राजा दुष्यंत और शकुंतला ऋषि कण्व के आश्रम में मिलते हैं और एक-दूसरे से प्रेम करने लगते हैं। जिसके फलस्वरुप वे बिना किसी औपचारिक अनुष्ठान के केवल प्रकृति को साक्षी मानकर गंधर्व विवाह (एक प्रकार का प्रेम-विवाह) करते हैं। अपने प्रेम विवाह को मजबूत बनाने के लिए एवं संस्कार स्वरुप शाकुंतला को अपनी अंगूठी देता हैं। यह अंगूठी प्यार की निशानी होती है। राजा दुष्यंत वचन देता हैं कि महर्षि कण्व के आने पर दुष्यंत शाकुंतला से विवाह करके अपने राज्य हस्तिनापुर ले जाउग। राजमहल में अनेक स्त्रियों के होते हुए भी मैं शाकुंतला को अपनी महारानी बनाऊंगा और इसी का पुत्र मेरी गद्दी का उत्तराधिकारी भी होगा।

"परिग्रहबहुत्वेऽपि द्वे प्रतिष्ठे कुलस्य नः।
समुद्ररसना चोर्वी, सखी च युवयोरियम्।।"[12]

आश्रम में राजा दुष्यंत का सत्कार- भारतीय संस्कृति अतिथि देवो भव: अर्थात अतिथि ही देवता है इस मूलाधार पर कार्य करती है। भारतीय संस्कृति में अतिथि को देव तुल्य माना गया है और यही विशेषता भारतीय संस्कृति को महान एवं समृद्ध बनती है। जब राजा दुष्यंत कण्व के आश्रम में प्रवेश करते हैं, तो वहाँ के तपस्वी उनका बहुत आदर-सत्कार करते हैं। अनसूया कहती है कि इस समय अतिथि विशेष के आ जाने से तपस्या सफल ही समझिए। राजा को फल-फूल और जल से सत्कार करने की बात कही जाती है और उन्हें शीतल स्थान पर बैठने के लिए कहा जाता है, जो आश्रम की सादगी और अतिथियों के प्रति सम्मान को दर्शाता है। "प्रियवंदा- स्वागतमार्यस्य। हला शकुन्तले ! गच्छ उटजात् फलमिश्रमर्घ्यभाजनमुण्हर। इदमपि पादोदकं भविष्यति।"[13]

महाकवि कालिदास द्वारा रचित अमर कृति अभिज्ञान शाकुन्तलम् भारतीय जीवन मूल्यों का एक उत्कृष्ट दर्पण है और भारतीय समाज और संस्कृति का प्रतिबिम्ब है। जिसमें प्रेम, कर्तव्य, त्याग, तपस्या, और सामाजिक एवं पारिवारिक आदर्शों का अनूठा संगम देखने को मिलता है। यह नाटक भारतीय संस्कृति एवं जीवन दर्शन में आदर्श मूल्यों को स्थापित करता है। अभिज्ञान शाकुन्तलम् भारतीय जीवन दर्शन का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. अभिज्ञानशकुंतलम्, संपादक- प्रो. बालशास्त्री, प्रकाशन- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी, संस्करण- 2013 श्लोक संख्या- 20/4.
2. वही, श्लोक संख्या- 19/04.
3. वही, श्लोक संख्या- 11/04.
4. वही, श्लोक संख्या- 06/05.
5. वही, श्लोक संख्या- 16/01.
6. वही, श्लोक संख्या- 05/06.
7. वही, श्लोक संख्या- 12/06.
8. वही, श्लोक संख्या- 08/04.
9. वही, श्लोक संख्या- 11/02.
10. वही, श्लोक संख्या- 24/04.
11. वही, श्लोक संख्या- 01/04.
12. वही, श्लोक संख्या- 23/03.
13. वही, पृष्ठ संख्या- 66.

•